2006:CGHC:4475

<u>प्रकाशन हेतु अनुमोदित</u>

छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर

रिट याचिका क्रमांक – 5887 / 2005

मुहम्मद कलाम

बनाम

छत्तीसगढ़ राज्य एवं अन्य

निर्णय

अगली सुनवाई हेतु नियत —— 13.10.2006

हस्ताक्षरित/–

सुनील कुमार सिन्हा

न्यायाधीश

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

2006:CGHC:4475

पकाशन हेतु अनुमोदित

छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर

रिट याचिका क्रमांक – 5887 / 2005

मुहम्मद कलाम

बनाम

छत्तीसगढ़ राज्य एवं अन्य

उपस्थिति : श्री संजय के. अग्रवाल एवं श्री सौरभ शर्मा, याचिकाकर्ता की ओर से अधिवक्ता।
श्री सतीश गुप्ता, उप शासकीय अधिवक्ता, राज्य/ उत्तरवादी क्रमांक 1 से 3 की ओर से श्री सौरभ डांगी, उत्तरवादी क्रमांक 4 के अधिवक्ता।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

निर्णय

(13.10.2006)

माननीय श्री सुनील कुमार सिन्हा, न्यायाधीश

1. संचालक पंचायत (छत्तीसगढ़), रायपुर, द्वारा अपील प्रकरण क्रमांक 111/क–89/2004–2005 में पारित आदेश दिनांक 05.10.2005 को चुनौती दी गई है, जिसके द्वारा उक्त प्राधिकारी ने याचिकाकर्ता की अपील को ख़ारिज कर दिया तथा छत्तीसगढ़ पंचायत राज अधिनियम, 1993 (जिसे आगे "अधिनियम, 1993" कहा जाएगा) की धारा 36 की उपधारा (3) के अंतर्गत सक्षम प्राधिकारी द्वारा पारित आदेश की पुष्टि की।

2. संक्षिप्त तथ्यों की स्थिति यह है कि याचिकाकर्ता तथा उत्तरवादी क्रमांक 4 दोनों ग्राम पंचायत के सरपंच पद हेतु जनवरी 2005 माह में संपन्न निर्वाचन में प्रत्याशी थे, जिसमें याचिकाकर्ता विधिवत रूप से निर्वाचित हुआ। तत्पश्चात, उत्तरवादी क्रमांक 4 ने सक्षम प्राधिकारी के समक्ष यह परिवाद प्रस्तुत किया कि याचिकाकर्ता को 03.04.2001 को तृतीय संतान (पुत्री) प्राप्त हुई थी, अर्थात् दिनांक 26.01.2001 के पश्चात, तथा उक्त तथ्य को छिपाकर नामांकन पत्र प्रस्तुत किया गया। उसने प्रार्थना की कि, चूंकि

अधिनियम, 1993 की धारा 36 की उपधारा (1) के खंड (म) के अनुसार याचिकाकर्ता पंचायत पदाधिकारी बने रहने हेतु अयोग्य है, अतः उसे तत्काल पद से हटा दिया जाए। उक्त आवेदन के आधार पर सक्षम प्राधिकारी द्वारा प्रकरण क्रमांक 6–क/89/2004–2005 पंजीबद्ध किया गया और अधिनियम की धारा 36 की उपधारा (3) के अधीन कार्यवाही प्रारंभ की गई। याचिकाकर्ता को उत्तर प्रस्तुत करने हेतु निर्देशित किया गया तथा दोनों पक्षों को साक्ष्य प्रस्तुत करने के अवसर प्रदान किए गए और समुचित सुनवाई का अवसर प्रदान करने के पश्चात दिनांक 31.05.2005 को यह आदेश पारित किया गया कि याचिकाकर्ता की तृतीय संतान का जन्म दिनांक 03.04.2001 को हुआ, अतः अधिनियम, 1993 की धारा 36(1)(म) के अधीन वह अयोग्य हुआ और उक्त प्रावधानों के अंतर्गत पंचायत का पदाधिकारी बने रहने का अधिकारी नहीं है। सक्षम प्राधिकारी द्वारा पारित उक्त आदेश के विरुद्ध याचिकाकर्ता ने संचालक, पंचायत के समक्ष अपील दायर की, जिन्होंने अपील को ख़ारिज करते हुए सक्षम प्राधिकारी द्वारा पारित आदेश की पुष्टि की। उक्त आदेश के विरुद्ध ही याचिकाकर्ता ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 226/227 के अंतर्गत इस न्यायालय में याचिका प्रस्तुत की है।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

3. याचिकाकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने दो बिंदुओं पर जोर दिया गया । उनका प्रथम तर्क यह था कि याचिकाकर्ता की तृतीय संतान की जन्मतिथि के संबंध में जो निष्कर्ष निकाला गया है, वह विधि के अनुरूप नहीं है। उन्होंने विशेष रूप से इस बात पर बल दिया कि सक्षम प्राधिकारी ने जन्म और मृत्यु पंजीकरण अधिकारी द्वारा दिनांक 20.12.2004 को जारी प्रमाण पत्र (संलग्नक पी–3) में अंकित जन्मतिथि से संबंधित सुसंगत प्रविष्टियों पर विचार नहीं किया तथा उनका विधिपूर्वक मूल्यांकन नहीं किया। उनका तर्क था कि उक्त प्रविष्टि बाध्यकारी प्रकृति की है और यह याचिकाकर्ता की तृतीय संतान की जन्मतिथि का निर्णायक साक्ष्य है। दूसरा तर्क उन्होंने यह दिया कि सक्षम प्राधिकारी तथा अपीलीय प्राधिकारी द्वारा पारित आदेश अधिकार क्षेत्र के बाहर हैं, क्योंकि ऐसे आदेश पारित करने का परिणाम अंततः याचिकाकर्ता के निर्वाचन को ख़ारिज करने में होता है, और ऐसी स्थिति में एकमात्र उपलब्ध उपाय निर्वाचन याचिका दायर करना था; अतः उस वैधानिक उपाय को दरकिनार कर उत्तरवादी क्रमांक 4 के आवेदन को इन प्राधिकरणों द्वारा स्वीकार नहीं किया जाना चाहिए था, क्योंकि उसका वास्तविक परिणाम यह हुआ कि निर्वाचन को अपास्त कर दिया गया।

4. मैंने याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता की विस्तृत रूप से सुनवाई की है तथा रिट याचिका के अभिलेखों का भी अवलोकन किया है।

5. जहाँ तक जन्म प्रमाणपत्र में प्रविष्टियों से संबंधित प्रथम तर्क का प्रश्न है, याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने **श्रीमती वनजक्षम्मा एवं अन्य बनाम पी. गोपाल कृष्ण, AIR 1970 मैसूर 305** के मामले में पारित निर्णय तथा मध्यप्रदेश उच्च न्यायालय की खंडपीठ द्वारा **डी.के. आर्य, आई.पी.एस. बनाम भारत संघ, 1990 (1) MPWN नोट 204** में पारित निर्णय का उल्लेख किया।

6. उल्लेखित श्रीमती वनजक्षम्मा के प्रकरण (पूर्वोक्त) में, उक्त उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश ने, भारतीय दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 488 के अंतर्गत माता एवं दो बच्चों द्वारा प्रस्तुत प्रकरण की सुनवाई करते हुए, माता के उस बयान पर विश्वास किया जिसमें कहा गया था कि तृतीय याचिकाकर्ता (संतान) का जन्म बेल्लारी स्थित सरकारी महिला चिकित्सालय में हुआ था। उसने अपने कथनों का समर्थन करते हुए दस्तावेज़ प्रदर्श पी–1 प्रस्तुत किया, जो तृतीय याचिकाकर्ता के जन्म से संबंधित जन्म पंजिका एक उद्धरण थी। उच्च न्यायालय ने यह टिपण्णी की है की प्रदर्श पी–1 बेल्लारी नगर पालिका में जुलाई 1966 माह में पंजीकृत जन्म पंजिका से उद्घृत प्रमाणित प्रति है। उक्त उद्धरण में माता का नाम वनजक्षम्मा (प्रथम याचिकाकर्ता) और पिता का नाम गोपालकृष्ण (उत्तरवादी) अंकित है तथा जन्म स्थान के रूप में सरकारी महिला एवं बाल चिकित्सालय, बेल्लारी अंकित है। ऐसा अवलोकन करते हुए न्यायालय ने यह कहा कि प्रमाणपत्र प्रदर्श पी–1 एक सार्वजनिक दस्तावेज़ है और साक्ष्य अधिनियम की धारा 77 के अनुसार, सार्वजनिक दस्तावेज़ की प्रमाणित प्रति को उसके विषयवस्तु के प्रमाण हेतु प्रस्तुत किया जा सकता है। न्यायालय ने आगे कहा कि माता के साक्ष्य और प्रदर्श पी–1 की सामग्री के आधार पर यह उचित रूप से निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि याचिकाकर्ता 3 का जन्म उत्तरवादी से, प्रथम याचिकाकर्ता से विवाह के पश्चात, जब वे बेल्लारी में रह रहे थे, हुआ और अंततः यह निष्कर्ष दिया गया कि अन्य याचिकाकर्ता भी उत्तरवादी से प्रथम याचिकाकर्ता के साथ तिरुपति में विवाह उपरांत उत्पन्न संतान हैं।

7. उक्त प्रकरण में, विवाद का मुख्य तथ्य जन्मतिथि नहीं था। अपितु, प्रमाणपत्र को याचिकाकर्ताओं और उत्तरवादी के मध्य संबंध को सिद्ध करने हेतु सहायक साक्ष्य माना गया था, ताकि उनके भरण–पोषण के दावे पर विचार किया जा सके। न्यायालय ने कभी

WebCopy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

यह नहीं कहा कि प्रमाणपत्र में की गई कोई आक्षेपित प्रविष्टि उस प्रविष्टि का निर्णायक प्रमाण है, जो सभी पर बाध्यकारी हो और जिसकी प्रामाणिकता के विरुद्ध अन्य कोई साक्ष्य नहीं देखा जा सकता। उक्त न्यायालय के समक्ष इस प्रकार के प्रश्न पर विचार करने का कोई अवसर नहीं था, और याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता द्वारा उल्लिखित यह निर्णय उनके लिए सहायक नहीं है और पूर्ववर्ती बिंदुओं पर भिन्न है।

8. मध्यप्रदेश उच्च न्यायालय द्वारा पारित अगला निर्णय सेवा अभिलेखों में जन्मतिथि में संशोधन से संबंधित था, जिसके लिए कर्मचारी द्वारा जन्म प्रमाणपत्र के आधार पर नियोक्ता के समक्ष एक अभ्यावेदन प्रस्तुत किया गया था, जिसे ख़ारिज कर दिया गया। उक्त प्रसंग में, मध्यप्रदेश उच्च न्यायालय की खंडपीठ ने यह कहा कि इस तथ्य से इनकार नहीं किया जा सकता कि याचिकाकर्ता द्वारा प्रस्तुत अभिलेख विधिक बल रखते हैं, क्योंकि जन्म एवं मृत्यु का पंजिका विधि द्वारा नगर पालिका मण्डल द्वारा बनाए रखना अनिवार्य है। याचिकाकर्ता के पक्ष में अन्य सहायक साक्ष्य जैसे कि पुराना विद्यालय प्रमाणपत्र आदि भी थे और उन सभी तथ्यों तथा सेवा अभिलेख में हुई त्रुटि के संबंध में याचिकाकर्ता द्वारा दी गई व्याख्या पर विचार करते हुए, न्यायालय ने याचिकाकर्ता के सेवा अभिलेख में उसकी जन्मतिथि को 14.11.1937 अंकित करने हेतु एक *परमादेश रिट* (निर्देशात्मक आदेश) जारी किया, क्योंकि वैधानिक दस्तावेज़ संलग्नक पी–3 (जिसमें जन्म प्रमाणपत्र सम्मिलित था) को प्रभाव प्रदान करना विधिक रूप से आवश्यक था। उस प्रकरण में, याचिकाकर्ता की जन्मतिथि को लेकर कोई विवाद नहीं था और वही जन्मतिथि जन्म प्रमाणपत्र एवं विद्यालय प्रमाणपत्र दोनों में समान रूप से दर्ज थी, और ऐसी स्थिति में न्यायालय ने *परमादेश रिट* इसलिए जारी किया क्योंकि निर्विवाद वैधानिक दस्तावेज़ों के अतिरिक्त कोई विरोधाभासी दस्तावेज़ उपलब्ध नहीं था। वर्तमान प्रकरण की परिस्थितियों में यह विधिक सिद्धांत याचिकाकर्ता के पक्ष में सहायक नहीं है और यह भिन्न (distinguishable) है।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

9. याचिकाकर्ता का प्रकरण एक आक्षेपित प्रविष्टि का है और विचारणीय प्रश्न यह है कि क्या जन्म और मृत्यु पंजीकरण अधिनियम, 1969 की धारा 13 के अंतर्गत जारी प्रमाणपत्र की प्रविष्टियों को उसमें उल्लिखित जन्मतिथि का निर्णायक प्रमाण (conclusive proof) माना जाना चाहिए?

10. जन्म और मृत्यु का पंजीकरण अधिनियम, 1969 (जिसे आगे "अधिनियम, 1969" कहा जाएगा) केंद्र सरकार द्वारा इस उद्देश्य और कारण के साथ लाया गया था कि

सरकार को राष्ट्रीय योजना, सार्वजनिक स्वास्थ्य और चिकित्सकीय गतिविधियों के आयोजन तथा परिवार नियोजन कार्यक्रमों के विकास हेतु देशभर में जन्म और मृत्यु के पंजीकरण के लिए पर्याप्त और सटीक आंकड़ों की आवश्यकता है। राष्ट्रीय हित की दृष्टि से राज्यों द्वारा एक स्वीकार्य स्तर के प्रदर्शन की अपेक्षा की जाती है तथा पूरे देश में आंकड़ों के संग्रहण और संकलन में प्रयुक्त विधियों और मानकों की तकनीकी एकरूपता की आवश्यकता है। यह एक ऐसा अधिनियम है जो जन्म और मृत्यु के पंजीकरण के विनियमन तथा उससे संबंधित विषयों के लिए प्रावधान करता है। अधिनियम, 1969 की धारा 13 में जन्म और मृत्यु के विलंबित पंजीकरण से संबंधित प्रावधान किए गए हैं। धारा 13 की उपधारा (1) में यह प्रावधान है कि किसी जन्म की जानकारी यदि निर्धारित अवधि समाप्त होने के पश्चात, किंतु उसकी घटना के तिथि से तीस दिनों के भीतर पंजीयक को दी जाती है, तो ऐसी जन्म की प्रविष्टि निर्धारित विलंब शुल्क के भुगतान पर की जा सकती है। उपधारा (2) में प्रावधान है कि यदि किसी जन्म अथवा मृत्यु की जानकारी तीस दिनों के पश्चात, परंतु एक वर्ष के भीतर दी जाती है, तो उसका पंजीकरण केवल अधिसूचित प्राधिकारी की लिखित अनुमति, निर्धारित शुल्क के भुगतान तथा राज्य सरकार द्वारा अधिकृत किसी नोटरी पब्लिक अथवा अन्य अधिकारी के समक्ष शपथपत्र प्रस्तुत करने पर ही किया जा सकेगा। उपधारा (3) के अनुसार, यदि किसी जन्म अथवा मृत्यु का पंजीकरण उसकी घटना के एक वर्ष के भीतर नहीं किया गया है, तो उसका पंजीकरण केवल प्रथम श्रेणी के मजिस्ट्रेट अथवा प्रेसीडेंसी मजिस्ट्रेट द्वारा घटना की सत्यता का सत्यापन करने के उपरांत तथा निर्धारित शुल्क के भुगतान पर आदेश पारित करने पर ही किया जा सकेगा। उपधारा (4) यह प्रावधान करती है कि इस धारा के अंतर्गत निहित उपबंध, किसी व्यक्ति द्वारा निर्धारित समय–सीमा में जन्म या मृत्यु का पंजीकरण न कराने के संबंध में उसके विरुद्ध की जाने वाली किसी कार्यवाही को प्रभावित नहीं करेंगे, और ऐसी किसी कार्यवाही की लंबितावस्था में भी संबंधित जन्म या मृत्यु का पंजीकरण किया जा सकता है।

WebCopy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

11. वर्तमान प्रकरण में, संलग्नक पी–3 प्रमाणपत्र की विषयवस्तु के अनुसार यह प्रतीत होता है कि महिला बालिका कु. मुस्कान खान का जन्म 20.12.2004 को पंजीकृत किया गया, जबकि प्रमाणपत्र में यह अंकित है कि उसका जन्म 16.11.2000 को हुआ था। इसका तात्पर्य यह है कि यह प्रविष्टि निश्चित रूप से घटना की तिथि से एक वर्ष की अवधि के पश्चात की गई, भले ही यह अभिनिर्धारित किया जाए कि घटना 16.11.2000 को

घटित हुई थी, और यह अधिनियम, 1969 की धारा 13 की उपधारा (3) के प्रावधानों के अंतर्गत की गई प्रविष्टि है।

12. अधिनियम, 1969 की योजना इस उद्देश्य से निर्मित की गई है कि जनसामान्य पर जन्म और मृत्यु का पंजीकरण करवाने की एक अनुशासनात्मक बाध्यता हो, जिससे सरकार के विकासात्मक कार्यों के लिए एक दृष्टिगत रूप से सही आंकड़े उपलब्ध हो सकें; इसी उद्देश्य के साथ यह अधिनियम लाया गया। धारा 8 तथा तत्पश्चात धारा 13 में निहित प्रतिबंधों का उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि जन्म और मृत्यु की प्रविष्टियों में कोई हेरफेर न हो। इसी कारण विधानमंडल द्वारा समय की बाध्यता निर्धारित की गई है, और अंततः विलंबित पंजीकरण हेतु न्यायालय की मध्यस्थता से प्रावधान किया गया है कि यदि किसी जन्म या मृत्यु की प्रविष्टि उसकी घटना की तिथि से एक वर्ष के भीतर नहीं की गई है, तो वकियाह प्रविष्टि केवल मजिस्ट्रेट के आदेश द्वारा ही की जा सकती है। मजिस्ट्रेट के आदेश से की गई विलंबित प्रविष्टि केवल पंजीयक (Registrar) पर बाध्यकारी होती है, जिसे उक्त आदेश का पालन करना होता है, किंतु यह उस पक्षकार को बाध्यकारी नहीं होती जो जन्म पंजिका में की गई प्रविष्टि की सत्यता को चुनौती दे रहा है, जिसके आधार पर प्रमाणपत्र जारी किए जाते हैं। कोई भी पक्ष यह तर्क नहीं दे सकता कि चूंकि प्रविष्टियाँ न्यायालय के आदेश के अनुसार की गई थीं, अतः न्यायालय की स्वीकृति के कारण प्रविष्ट आंकड़ों को निर्णायक और अंतिम मान लिया जाए तथा इस आधार पर प्रविष्टि को जन्मतिथि का निर्णायक प्रमाण माना जाए। धारा 13(3) के प्रावधान किसी व्यक्ति की आक्षेपित जन्मतिथि के प्रश्न पर निर्णय प्राप्त करने हेतु कोई निर्णयात्मक मंच (adjudicatory forum) नहीं हैं, और उपधारा (3) के अंतर्गत क्षेत्राधिकार का प्रयोग करते हुए पारित कोई भी आदेश, आक्षेपित जन्मतिथि के प्रश्न पर कोई निर्णय या आदेश नहीं माना जा सकता। यह इस कारण और भी अधिक दर्शित होता है कि जन्मतिथि पर विवाद करने वाले पक्ष को संबंधित मजिस्ट्रेट के समक्ष उपस्थित होकर आपत्ति दर्ज करने तथा उस बिंदु पर प्रतिवाद करके निर्णय प्राप्त करने की आवश्यकता नहीं होती। अतः अधिनियम, 1969 के प्रावधानों के अंतर्गत पंजीयक द्वारा संधारित अभिलेखों में उल्लिखित जन्म अथवा मृत्यु की प्रविष्टि की स्थिति एक सुसंगत साक्ष्य (relevant evidence) की होगी, जो जन्म अथवा मृत्यु के प्रमाण हेतु प्रयुक्त हो सकती है, किंतु यह किसी व्यक्ति की जन्म अथवा मृत्यु की निर्णायक प्रमाण (conclusive proof) नहीं होगी, और सदैव न्यायालय द्वारा अन्य साक्ष्यों की भांति परीक्षण के अधीन होगी, तथा संबंधित न्यायालय

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

द्वारा प्रत्येक प्रकरण के तथ्यों, परिस्थितियों, साक्ष्य की विश्वसनीयता और मूल्यांकन के आधार पर उसकी सत्यता निर्धारित की जा सकेगी।

13. वर्तमान प्रकरण में, सक्षम प्राधिकारी ने अभिलेख में उपलब्ध साक्ष्यों का समुचित विवेचन करते हुए, चार वर्ष विलंब से की गई इस प्रविष्टि पर विश्वास नहीं किया और यह निर्णय दिया कि अभिलेख में उपलब्ध साक्ष्यों के आधार पर याचिकाकर्ता की तृतीय संतान का जन्म 03.04.2001 को हुआ था, अर्थात् 26.01.2001 के पश्चात, और इस प्रकार याचिकाकर्ता पंचायत का पदाधिकारी बने रहने के लिए अयोग्यता से ग्रस्त हुआ।

14. जहाँ तक अनुच्छेद 227 का प्रश्न है, सर्वोच्च न्यायालय ने किराया नियंत्रण विधान से संबंधित प्रकरण में, ***लक्ष्मीकांत रेवचंद भोजवानी एवं अन्य बनाम प्रतापसिंह मोहनसिंह परदेशी (मृतक, द्वारा उसके वारिसों एवं विधिक प्रतिनिधि),*** (1995) 6 SCC 576 में यह निर्णय दिया कि उच्च न्यायालय का भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के अंतर्गत अपना क्षेत्राधिकार विस्तारित करना न्यायसंगत नहीं था, क्योंकि उक्त भाडा नियंत्रण अधिनियम मकानमालिक और किरायेदार के संबंधों एवं विवादों को नियंत्रित करने वाला एक विशेष विधान था। सर्वोच्च न्यायालय ने यह कहा कि विधानमंडल ने जानबूझकर उच्च न्यायालय के समक्ष द्वितीय अपील अथवा पुनरीक्षण का प्रावधान नहीं किया है। इसका उद्देश्य अपीलीय प्राधिकरण के निर्णय को अंतिमता प्रदान करना है। भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के अंतर्गत उच्च न्यायालय समस्त प्रकार के कष्ट या गलत निर्णयों को सुधारने का असीम विशेषाधिकार नहीं ग्रहण कर सकता। इसका प्रयोग केवल उन मामलों तक सीमित रहना चाहिए जहाँ कर्तव्य की गंभीर उपेक्षा या विधि अथवा न्याय के मूल सिद्धांतों का घोर दुरुपयोग हुआ हो, और जहाँ उच्च न्यायालय के हस्तक्षेप के बिना गंभीर अन्याय होने की संभावना हो।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

15. सर्वोच्च न्यायालय ने ***सुगरबाई ऍम . सिद्दीक एवं अन्य बनाम रमेश एस. हनकरे (मृतक), द्वारा विधिक प्रतिनिधिगण),*** (2001) 8 एससीसी 477 के प्रकरण में पुनः यह स्थापित विधिक सिद्धांत प्रतिपादित किया कि संविधान के अनुच्छेद 227 के अंतर्गत दायर याचिका में उच्च न्यायालय को यह देखना होता है कि क्या अधीनस्थ न्यायालय या अधिकरण को उस प्रकरण पर विचार करने का अधिकार–क्षेत्र (jurisdiction) प्राप्त था, और यदि था, तो क्या आक्षेपित आदेश प्रक्रिया संबंधी अनियमितताओं से ग्रस्त है; दूसरे

शब्दों में, न्यायालय का उद्देश्य निर्णय के गुण–दोष पर नहीं, बल्कि निर्णय प्रक्रिया की वैधता पर केंद्रित होता है।

16. तथ्यात्मक और परिस्थितिजन्य स्थिति में, रिट क्षेत्राधिकार के अंतर्गत साक्ष्यों का पुनर्मूल्यांकन पूर्णतः असंभव है, और याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह तर्क कि याचिकाकर्ता की तृतीय संतान की जन्मतिथि के संबंध में निकाला गया निष्कर्ष विधि के अनुरूप नहीं है—को भिन्न दृष्टिकोण अपनाकर स्वीकार नहीं किया जा सकता।

17. सक्षम प्राधिकारी के अधिकार–क्षेत्र से संबंधित द्वितीय बिंदु पूर्णतः भ्रांतिपूर्ण (misconceived) है। याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत यह तर्क कि याचिकाकर्ता के निर्वाचन के विरुद्ध क्षुब्ध व्यक्ति के लिए एकमात्र उपाय निर्वाचन याचिका दायर करना था—को संविधानिक प्रावधानों तथा अधिनियम, 1993 के प्रावधानों के प्रकाश में स्वीकार नहीं किया जा सकता। भारत के संविधान का भाग IX पंचायती राज व्यवस्था से संबंधित है। अनुच्छेद 243–एफ सदस्यता के लिए अपात्रता (disqualification) से संबंधित है। इस अनुच्छेद की उपधारा (1) यह प्रावधान करती है कि कोई व्यक्ति पंचायत का सदस्य चुने जाने अथवा बने रहने हेतु अपात्र होगा—
(क) यदि वह उस राज्य की विधान सभा के निर्वाचन के प्रयोजन से प्रभावशील किसी विधि के अधीन अपात्र हो; बशर्ते कि कोई व्यक्ति केवल इस आधार पर अपात्र नहीं होगा कि उसकी आयु 25 वर्ष से कम है, यदि उसने 21 वर्ष की आयु पूर्ण कर ली हो;
(ख) यदि वह राज्य विधानमंडल द्वारा निर्मित किसी विधि के अधीन अपात्र हो। इस अनुच्छेद की उपधारा (2) में आगे यह प्रावधान किया गया है कि यदि यह प्रश्न उत्पन्न होता है कि क्या किसी पंचायत सदस्य को उपधारा (1) में उल्लिखित किसी अपात्रता का शिकार होना पड़ा है, तो उक्त प्रश्न उस प्राधिकरण को निर्णय हेतु निर्देशित किया जाएगा, और उस विधि में, जैसा कि राज्य विधानमंडल द्वारा विधि द्वारा विनिर्दिष्ट किया गया हो। इसके अतिरिक्त, अनुच्छेद 243–क में पंचायतों के निर्वाचन का प्रावधान किया गया है। इस अनुच्छेद की उपधारा (4) यह प्रावधान करती है कि संविधान के प्रावधानों के अधीन रहते हुए, राज्य की विधानमंडल पंचायतों के निर्वाचन से संबंधित अथवा उस संदर्भ में सभी विषयों के संबंध में विधि द्वारा प्रावधान कर सकता है। इसके पश्चात, इसी भाग में अंतिम रूप से अनुच्छेद 243–ओ में न्यायालयों द्वारा निर्वाचन संबंधी मामलों में हस्तक्षेप पर निषेध का प्रावधान किया गया है, जिसमें यह उपबंध है कि संविधान में अन्यथा कुछ भी न होते हुए—

Web Copy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

(क) अनुच्छेद 243–क के अंतर्गत किए गए या किए जाने का आभास देने वाले निर्वाचन क्षेत्रों की सीमांकन अथवा उन निर्वाचन क्षेत्रों को सीटों के आवंटन से संबंधित किसी विधि की वैधता को किसी न्यायालय में प्रश्न के रूप में नहीं उठाया जा सकेगा;

(ख) किसी भी पंचायत के निर्वाचन को केवल एक निर्वाचन याचिका के माध्यम से ही प्रश्नगत किया जा सकेगा, जो कि उस प्राधिकरण के समक्ष और उस प्रकार से प्रस्तुत की गई हो, जैसा कि राज्य की विधानमंडल द्वारा बनाई गई विधि में या उसके अधीन उपबंधित किया गया हो। उपरोक्त आलोक में, अधिनियम, 1993 के प्रावधानों को पढ़ा जाना अपेक्षित है। इस अधिनियम की धारा 36 पंचायत के पदाधिकारियों के रूप में कार्य करने के लिए अयोग्यता (disqualification) का प्रावधान करती है, और इसमें अनेक अयोग्यताओं को समाहित किया गया है। ऐसी ही एक अयोग्यता, जिससे हम प्रत्यक्ष रूप से संबद्ध हैं, धारा 36 की उपधारा (1) के खंड (म) में वर्णित है, जिसमें यह कहा गया है कि ऐसा कोई व्यक्ति पंचायत का पदाधिकारी बनने के लिए पात्र नहीं होगा, जिसके दो से अधिक जीवित संतान हों, जिनमें से कोई एक 26 जनवरी 2001 अथवा उसके बाद जन्मा हो। धारा 36 की उपधारा (2) यह प्रावधान करती है कि यदि कोई व्यक्ति, पंचायत का पदाधिकारी निर्वाचित होने के उपरांत——

Web Copy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

(क) उपधारा (1) में उल्लिखित किसी अपात्रता का शिकार हो जाता है, और ऐसी अपात्रता असंवरणीय है या होते हुए भी समाप्त नहीं की गई है, अथवा वह व्यक्ति अपनी अपात्रता को छिपाकर पदाधिकारी बन गया है, और जिसकी वैधता का परीक्षण तथा निर्णय धारा 122 के अंतर्गत किसी निर्वाचन याचिका द्वारा नहीं किया गया है;

(ख) xxx xxx xxx

(ग) xxx xxx xxx

तो वह, उपधारा (3) के प्रावधानों के अधीन, उस पदाधिकारी के रूप में पद धारण करना बंद कर देगा तथा उसका पद रिक्त हो जाएगा। इस उपधारा में एक परंतुक (proviso) है, जिससे हम वर्तमान प्रकरण में संबंधित नहीं हैं। आगे, उपधारा (3) यह प्रावधान करती है कि प्रत्येक ऐसे मामले में जिसमें उपधारा (2) के अंतर्गत कोई रिक्ति उत्पन्न हुई है या नहीं, यह निर्णय लेने हेतु सक्षम प्राधिकारी ग्राम पंचायत एवं जनपद पंचायत के संदर्भ में कलेक्टर तथा जिला पंचायत के संदर्भ में पंचायत संचालक होगा, जो या तो किसी व्यक्ति

द्वारा प्रस्तुत आवेदन के आधार पर अथवा स्वप्रेरणा से यह निर्णय दे सकता है। जब तक कि कलेक्टर अथवा पंचायत संचालक (जैसा भी प्रासंगिक हो) यह निर्णय न दे कि पद रिक्त हो चुका है, तब तक वह व्यक्ति पदाधिकारी के रूप में पद धारण करता रहेगा। इस उपधारा में यह भी परंतुक जोड़ी गई है कि किसी भी पदाधिकारी के विरुद्ध इस उपधारा के अंतर्गत कोई आदेश पारित नहीं किया जाएगा, जब तक कि उसे सुनवाई का युक्तियुक्त अवसर प्रदान न किया गया हो। इसके पश्चात, उपधारा (4) यह प्रावधान करती है कि कोई भी व्यक्ति, जो उपधारा (3) के अंतर्गत कलेक्टर अथवा पंचायत संचालक (जैसा प्रकरण में उपयुक्त हो) द्वारा पारित निर्णय से क्षुब्ध हो, वह ऐसे निर्णय की तिथि से 30 दिवस की अवधि के भीतर, क्रमशः पंचायत संचालक अथवा राजस्व मण्डल में अपील कर सकता है, और ऐसी अपील में पारित आदेश अंतिम होंगे। धारा 122 निर्वाचन याचिका से संबंधित प्रावधान करती है। उपधारा (1) में यह उपबंध है कि इस अधिनियम के अंतर्गत किया गया कोई भी निर्वाचन "केवल" इस धारा में वर्णित प्राधिकरणों के समक्ष, विनिर्दिष्ट विधि से प्रस्तुत याचिका के माध्यम से ही प्रश्नगत किया जा सकेगा। उपधारा (2) में यह प्रावधान है कि ऐसी कोई भी याचिका स्वीकार नहीं की जाएगी जब तक कि वह— यह याचिका उस तिथि से 30 दिनों की अवधि के भीतर प्रस्तुत न की जाए, जिस दिन प्रश्नाधीन निर्वाचन अधिसूचित किया गया था; और आगे उपधारा (3) यह प्रावधान करती है कि ऐसी याचिका की जाँच अथवा निस्तारण उस प्रक्रिया के अनुसार किया जाएगा, जो विनियमित की गई हो। धारा 95(1) के साथ पठित धारा 122 की उपधारा (i) एवं (iii) के अंतर्गत प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए, राज्य विधानमंडल ने **मध्यप्रदेश (छत्तीसगढ़) पंचायत (निर्वाचन याचिकाएं, भ्रष्ट आचरण एवं सदस्यता की अपात्रता) नियम, 1995** नामक नियम बनाए हैं। ये नियम निर्वाचन याचिका की प्रस्तुति की विधि तथा ऐसी याचिकाओं के निस्तारण की प्रक्रिया से संबंधित हैं। नियम 21 विशेष रूप से उन आधारों से संबंधित है जिन पर निर्वाचन को शून्य घोषित किया जा सकता है। उप–नियम (1)(क) में यह उपबंध किया गया है कि उप–नियम (2) के प्रावधानों के अधीन, यदि निर्दिष्ट अधिकारी इस मत का हो कि निर्वाचित प्रत्याशी निर्वाचन की तिथि को अधिनियम के अंतर्गत सीट भरने के लिए पात्र नहीं था या अपात्र था, तो वह अधिकारी निर्वाचित प्रत्याशी के निर्वाचन को शून्य घोषित करेगा।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

18. यदि अधिनियम, 1993 की योजना एवं उसके अधीन बनाए गए नियमों का पूर्ववर्ती संविधानिक प्रावधानों के संदर्भ में परीक्षण किया जाए, तो यह प्रतीत होता है कि राज्य विधानमंडल ने संविधान के अनुच्छेद 243–एफ(1)(ख) के प्रावधानों को ध्यान में रखते

हुए धारा 36(1) का सृजन किया है तथा इसके अतिरिक्त धारा 36(2), (3) एवं (4) के प्रावधानों को अनुच्छेद 243–एफ के उपखंड (2) को ध्यान में रखकर सृजित किया गया है। पंचायतों के निर्वाचन से संबंधित विधि बनाते समय राज्य विधानमंडल संविधान के प्रावधानों, विशेष रूप से अनुच्छेद 243–क(4) तथा अनुच्छेद 243–ओ(o) में निहित प्रावधानों के प्रति सजग था, और इन्हीं के अनुरूप दो पृथक व्यवस्थाएं—एक धारा 36(1), (2), (3) एवं (4) के अंतर्गत तथा दूसरी धारा 122 के अंतर्गत—स्वतंत्र रूप से निर्धारित की गईं। संविधान ने स्वयं अनुच्छेद 243–एफ(2) के माध्यम से यह उपबंध किया है कि सदस्यता की अपात्रता को निर्धारित करने हेतु, जिसे राज्य विधानमंडल विधि द्वारा विनिर्दिष्ट करेगा, प्रश्न संबंधित प्राधिकारी को उस विधि में निर्दिष्ट प्रक्रिया के अनुसार निर्णय हेतु निर्देशित किया जाएगा। अतः ये दोनों प्रावधान, जो अनुच्छेद 243–एफ और 243–क के अनुरूप हैं, पंचायतों के प्रशासन के दो भिन्न क्षेत्रों में क्रियान्वित होते हैं, और यह नहीं कहा जा सकता कि अपात्रता सहित सभी प्रकार के प्रकरण केवल न्याय– निर्णय निर्वाचन मंच द्वारा ही निपटाए जा सकते हैं और अपात्रता का निर्धारण केवल निर्वाचन–याचिका के माध्यम से ही किया जा सकता है। यदि ऐसा दृष्टिकोण अपनाया जाता है, तो यह संविधान की उस भावना के विरुद्ध होगा, जिसमें यह दर्शित रूप से उपबंधित है कि सदस्यता की अपात्रता निर्धारित करने हेतु राज्य विधानमंडल पृथक प्रावधान बना सकता है और राज्य को इस संबंध में प्राधिकरण बनाने एवं एक प्रक्रिया बनाने की स्वतंत्रता भी देती है, जिसमें इसे निर्धारित किया जाएगा।

WebCopy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

19. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत यह तर्क कि अपात्रता निर्धारित करने का एकमात्र उपाय केवल निर्वाचन याचिका ही है तथा इस संबंध में कोई स्वतंत्र कार्यवाही नहीं चलाई जा सकती, और यदि चलाई जाती है तो वह संविधान के अनुच्छेद 243–ओ के प्रावधानों के विरुद्ध है—को स्वीकार नहीं किया जा सकता। वस्तुतः, स्वयं राज्य विधानमंडल ने अधिनियम की धारा 36 की उपधारा (2)(क) में यह उपबंध किया है कि यदि कोई व्यक्ति अपनी अपात्रता को छिपाकर पंचायत पदाधिकारी बनता है, "और जिसकी वैधता को धारा 122 के अंतर्गत किसी निर्वाचन याचिका द्वारा प्रश्नगत नहीं किया गया हो और न ही उस पर निर्णय दिया गया हो", तो ऐसे प्रकरण को इस धारा में वर्णित प्राधिकारी के समक्ष निर्णय हेतु प्रस्तुत किया जाएगा। ये वाक्यांश अत्यंत महत्वपूर्ण हैं और यह इस बात का दर्शित संकेत हैं कि यदि किसी निर्वाचन मंच द्वारा उस प्रश्न का पहले ही निर्णय कर दिया गया है, तो वह प्रश्न पुनः इस प्राधिकारी के समक्ष विचार हेतु प्रस्तुत नहीं किया जाएगा; और यदि वह प्रश्न निर्वाचन मंच के समक्ष न तो उठाया गया है और न ही

उस पर निर्णय दिया गया है, तभी उसे इस धारा के अंतर्गत निर्णय हेतु प्रस्तुत किया जा सकता है। एक अन्य महत्वपूर्ण पक्ष यह है कि ऐसी स्थिति हो सकती है जहाँ कोई व्यक्ति अपनी अपात्रता को छिपाकर निर्वाचित हो गया हो, किंतु उसके निर्वाचन को धारा 122 के अंतर्गत निर्वाचन याचिका द्वारा प्रश्नगत न किया गया हो, और उसका पद पर बने रहना उसकी लोकप्रियता या इस आधार पर हो सकता है कि सभी लोग चाहते हों कि वह पद पर बना रहे। यदि याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता का यह तर्क स्वीकार कर लिया जाए, तो ऐसी स्थिति में कोई भी उसे पद से हटा नहीं पाएगा और एक अपात्र व्यक्ति, जो विधिक अथवा संविधानिक रूप से निर्वाचित होने का भी अधिकारी नहीं था, वह पद पर बना रहेगा और कोई भी उसे हटाने में सक्षम नहीं होगा। निःसंदेह, यह न तो संविधान की भावना है और न ही अधिनियम की। अतः, अपात्रता के प्रश्न का निर्णय करने हेतु दो मंच उपलब्ध हैं—(i) धारा 36(2) एवं (3) के अंतर्गत तथा (ii) धारा 122 के अंतर्गत निर्वाचन याचिका दायर कर। किंतु, धारा 36(2) एवं (3) के प्रावधानों का प्रयोग एक शर्त के अधीन है कि वह केवल तब ही किया जा सकता है जब अपात्रता का तथ्य अधिनियम की धारा 122 के अंतर्गत किसी निर्वाचन याचिका द्वारा न तो प्रश्नगत किया गया हो और न ही उस पर निर्णय हुआ हो। और उसी अनुरूप इसका अनुपालन किया जाना चाहिए।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

20. उपर्युक्त के दृष्टिगत, यह अभिनिर्धारित किया जाता है कि संबंधित कलेक्टर को ऐसी याचिका की सुनवाई करने हेतु पूर्ण अधिकार और क्षेत्राधिकार प्राप्त था, और याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत तर्क असफल सिद्ध होते हैं।

21. परिणामस्वरूप, यह रिट याचिका ख़ारिज की जाती है। पक्षकारों को वाद व्यय वहन करने संबंधी कोई आदेश नहीं दिया जाता है।

सही/–
सुनील कुमार सिन्हा
न्यायाधीश

अस्वीकरणः हिन्दी भाषा में निर्णय का अनुवाद पक्षकारों के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा । समस्त कार्यालयीन एवं व्यवहारिक प्रयोजनों हेतु **निर्णय का अंग्रेजी स्वरुप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।**

Translated By Abhishek Banjare, Advocate